डॉ. सुषमा देवी

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, बद्रुका कॉलेज काचीगुड़ा, हैदराबाद

औरत

औरत तो वही अच्छी लगती है
जो
आँगन में गौरेया सी चहकती है
घर को घर होने का अहसास देती है
रिश्तों में शहद सी मिठास भरती है
औरत तो वही अच्छी लगती है
जो
चहुँओर खुशबू बिखेरती है
बाबुल, भाई से अपने नाज उठवाती है
जीभर कर माँ से लड़ियाती है
औरत तो वही अच्छी लगती है
जो
जो सुंदरता के मानकों पर खरी उतरती है
सबकी ख़ुशी के लिए अपनी ख़ुशी को फांसी दे देती है
सबकी चाहतों को पूरा करते-करते खुद अधूरी रह जाती है
औरत वो नहीं अच्छी लगती है
जो
अपना दिमाग चलाती है
सही-गलत को तोलना जानती है
अपनी जुबान चलाती है
औरत वो नहीं अच्छी लगती है
जो
हवा के साथ मिटना नहीं जानती है
आकाश की ऊँचाई नापती है
आग से खेलना जानती है
नदियों सी बहना चाहती है
औरत वो नहीं अच्छी लगती है
जो
माटी से पनपना चाहती है
सबके मनोरंजन का सामान नहीं बनती है
वस्तु से व्यक्ति की परिसीमा में पहुँचती है
औरत महान बन जाती है
जो
त्याग, सहनशक्ति को धारती है
ममता की प्रतिमूर्ति बनती है
अत्याचारों को सहना अपनी नियति मानती है
औरत महान बन जाती है
जो
रोटी,कपड़ा,मकान के लिए परजीवी बनती है
घर के गुलफाम की गुल बन जाती है
सुरक्षा के बेड़े में असुरक्षा के काँटे उगाती है